

श्री आत्मसिद्धि शास्त्रनी स्तुति



पतित जन पावनी, सुर सरिता समी,
अधम उद्धारिणी आत्मसिद्धि,
जन्म जन्मांतरो जाणता जोगीए,
आत्मअनुभव वडे आज दीधी;
भक्त भगीरथ समा, भाग्यशाळी महा,
भव्य सौभाग्यनी विनतिथी,
चारुतर भूमिना नगर नडियादमां,
पूर्ण कृपा प्रभुए करी'ती. पतित. १

याद नदीनी धरे, नाम नडियाद पण,
चरण चूमी महापुरुषोना,
परमकृपाळुनी चरणरज संतनी,
भक्तिभूमि हरे चित्त सौना;
समीप रही एक अंबालाले तहीं,
भक्ति करी दीप हाथे धरीने,
एकी कलमे करी पूरी कृपाळुए,
आसो वद एकमे 'सिद्धिजीने. पतित. २

श्री आत्मसिद्धि शास्त्र



- जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत. १
- वर्तमान आ काळमां, मोक्षमार्ग बहु लोप;
विचारवा आत्मार्थीने, भाख्यो अत्र अगोप्य. २
- कोई क्रियाजड थई रह्या, शुष्कज्ञानमां कोई;
माने मारग मोक्षनो, करुणा ऊपजे जोई. ३
- बाह्य क्रियामां राचता, अंतर्भेद न कांई;
ज्ञानमार्ग निषेधता, तेह क्रियाजड आंई. ४
- बंध मोक्ष छे कल्पना, भाखे वाणी मांही;
वर्ते मोहावेशमां, शुष्कज्ञानी ते आंही. ५
- वैराग्यादि सफळ तो, जो सह आतमज्ञान;
तेम ज आतमज्ञाननी, प्राप्तितणां निदान. ६
- त्याग विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान;
अटके त्याग विरागमां, तो भूले निजभान. ७

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, तहां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थी जन एह. ८
सेवे सद्गुरुचरणे, त्यागी दई निजपक्ष;
पामे ते परमार्थने, निजपदनो ले लक्ष. ९
आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदयप्रयोग;
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्गुरु लक्षण योग्य. १०
प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार;
एवो लक्ष थया विना, ऊगे न आत्मविचार. ११
सद्गुरुना उपदेश वण, समजाय न जिनरूप;
समज्या वण उपकार शो ? समज्ये जिनस्वरूप. १२
आत्मादि अस्तित्वनां, जेह निरूपक शास्त्र;
प्रत्यक्ष सद्गुरु योग नहीं, त्यां आधार सुपात्र. १३
अथवा सद्गुरुए कह्यां, जे अवगाहन काज;
ते ते नित्य विचारवां, करी मतांतर त्याज. १४
रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या एम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष. १५

प्रत्यक्ष सदगुरु योगथी, स्वच्छंद ते रोकाय;
 अन्य उपाय कर्या थकी, प्राये बमणो थाय. १६

स्वच्छंद, मत आग्रह तजी, वर्ते सदगुरुलक्ष;
 समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष. १७

मानादिक शत्रु महा, निज छंदे न मराय;
 जातां सदगुरु शरणमां, अल्प प्रयासे जाय. १८

जे सदगुरु उपदेशथी, पाम्यो केवळज्ञान;
 गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान. १९

एवो मार्ग विनय तणो, भाख्यो श्री वीतराग;
 मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य. २०

असदगुरु ए विनयनो, लाभ लहे जो कांई;
 महामोहनीय कर्मथी, बूडे भवजळ मांही. २१

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे एह विचार;
 होय मतार्थी जीव ते, अवळो ले निर्धार. २२

होय मतार्थी तेहने, थाय न आतमलक्ष;
 तेह मतार्थी लक्षणो, अहीं कहां निर्पक्ष. २३

मतार्थी-लक्षण

- बाह्यत्याग पण ज्ञान नहीं, ते माने गुरु सत्य;
अथवा निजकुळधर्मना, ते गुरुमां ज ममत्व. २४
- जे जिनदेह प्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि;
वर्णन समजे जिननुं, रोकी रहे निज बुद्धि. २५
- प्रत्यक्ष सद्गुरुयोगमां, वर्ते दृष्टि विमुख;
असद्गुरुने दृढ करे, निज मानार्थे मुख्य. २६
- देवादि गति भंगमां, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निज मत वेषनो, आग्रह मुक्तिनिदान. २७
- लह्यं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्यं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान. २८
- अथवा निश्चय नय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्व्यवहारने, साधन रहित थाय. २९
- ज्ञानदशा पामे नहीं, साधनदशा न कांई;
पामे तेनो संग जे, ते बूडे भव मांही. ३०
- ए पण जीव मतार्थमां, निजमानादि काज;
पामे नहीं परमार्थने, अन्-अधिकारीमां ज. ३१

नहि कषाय उपशांतता, नहि अंतर वैराग्य;
सरळपणुं न मध्यस्थता, ए मतार्थी दुर्भाग्य. ३२
लक्षण कह्यां मतार्थीनां, मतार्थ जावा काज;
हवे कहुं आत्मार्थीनां, आत्म-अर्थ सुखसाज. ३३

आत्मार्थी-लक्षण

आत्मज्ञान त्यां मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय;
बाकी कुळगुरु कल्पना, आत्मार्थी नहि जोय. ३४
प्रत्यक्ष सद्गुरु प्राप्तिनो, गणे परम उपकार;
त्रणे योग एकत्वथी, वर्ते आज्ञाधार. ३५
एक होय त्रण काळमां, परमारथनो पंथ;
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार समंत. ३६
एम विचारी अंतरे, शोधे सद्गुरु योग;
काम एक आत्मार्थनुं, बीजो नहि मनरोग. ३७
कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष अभिलाष;
भवे खेद, प्राणीदया, त्यां आत्मार्थ निवास. ३८
दशा न एवी ज्यां सुधी, जीव लहे नहि जोग;
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अंतर रोग. ३९

आवे ज्यां एवी दशा, सद्गुरुबोध सुहाय;
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय. ४०

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रगटे निज ज्ञान;
जे ज्ञाने क्षय मोह थई, पामे पद निर्वाण. ४१

ऊपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय;
गुरुशिष्यसंवादथी, भाखुं षट्पद आंही. ४२

षट्पदनामकथन

‘आत्मा छे’, ‘ते नित्य छे’, ‘छे कर्ता निजकर्म’;
‘छे भोक्ता’, वळी ‘मोक्षछे’, ‘मोक्षउपायसुधर्म’. ४३

षट्स्थानक संक्षेपमां, षट्दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीए एह. ४४

(१) शंका - शिष्य उवाच

नथी दृष्टिमां आवतो, नथी जणातुं रूप;
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथी न जीवस्वरूप. ४५

अथवा देह ज आतमा, अथवा इन्द्रिय प्राण;
मिथ्या जुदो मानवो, नहीं जुदुं एंधाण. ४६

वळी जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहि केम?
जणाय जो ते होय तो, घट पट आदि जेम. ४७
माटे छे नहीं आत्मा, मिथ्या मोक्ष उपाय;
ए अंतर शंका तणो, समजावो सदुपाय. ४८

(१) समाधान - सद्गुरु उवाच

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बत्रे भिन्न छे, प्रगट लक्षणे भान. ४९
भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बत्रे भिन्न छे, जेम असि ने म्यान. ५०
जे द्रष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप;
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरूप. ५१
छे इन्द्रिय प्रत्येकने, निज निज विषयनुं ज्ञान;
पांच इन्द्रीना विषयनुं, पण आत्माने भान. ५२
देह न जाणे तेहने, जाणे न इन्द्री प्राण;
आत्मानी सत्ता वडे, तेह प्रवर्ते जाण. ५३
सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय;
प्रगटरूप चैतन्यमय, ए एंधाण सदाय. ५४

घट, पट आदि जाण तुं, तेथी तेने मान;
जाणनार ते मान नहीं, कहीए केवुं ज्ञान? ५५

परम बुद्धि कृश देहमां, स्थूळ देह मति अल्प;
देह होय जो आतमा, घटे न आम विकल्प. ५६

जड चेतननो भिन्न छे, केवळ प्रगट स्वभाव;
एकपणुं पामे नहीं, त्रणे काळ द्वयभाव. ५७

आत्मानी शंका करे, आत्मा पोते आप;
शंकानो करनार ते, अचरज एह अमाप. ५८

(२) शंका - शिष्य उवाच

आत्माना अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार;
संभव तेनो थाय छे, अंतर कर्ये विचार. ५९

बीजी शंका थाय त्यां, आत्मा नहि अविनाश;
देहयोगथी ऊपजे, देहवियोगे नाश. ६०

अथवा वस्तु क्षणिक छे, क्षणे क्षणे पलटाय;
ए अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय. ६१

(२) समाधान - सद्गुरु उवाच

देह मात्र संयोग छे, वळी जड रूपी दृश्य;
चेतननां उत्पत्ति लय, कोना अनुभव वश्य? ६२

जेना अनुभव वश्य ए, उत्पन्न लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जुदा विना, थाय न केमे भान. ६३

जे संयोगो देखिये, ते ते अनुभव दृश्य;
ऊपजे नहि संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष. ६४

जडथी चेतन ऊपजे, चेतनथी जड थाय;
एवो अनुभव कोईने, क्यारे कदी न थाय. ६५

कोई संयोगोथी नहि, जेनी उत्पत्ति थाय;
नाश न तेनो कोईमां, तेथी नित्य सदाय. ६६

क्रोधादि तरतम्यता, सर्पादिकनी मांय;
पूर्वजन्म संस्कार ते, जीव नित्यता त्यांय. ६७

आत्मा द्रव्ये नित्य छे, पर्याये पलटाय;
बाळादि वय त्रण्यनुं, ज्ञान एकने थाय. ६८

अथवा ज्ञान क्षणिकनुं, जे जाणी वदनार;
वदनारो ते क्षणिक नहीं, कर अनुभव निर्धार. ६९

क्यारे कोई वस्तुनो, केवळ होय न नाश;
चेतन पामे नाश तो, केमां भळे तपास. ७०

(३) शंका - शिष्य उवाच

कर्ता जीव न कर्मनो, कर्म ज कर्ता कर्म;
अथवा सहज स्वभाव कां, कर्म जीवनो धर्म. ७१

आत्मा सदा असंग ने, करे प्रकृति बंध;
अथवा ईश्वर प्रेरणा, तेथी जीव अबंध. ७२

माटे मोक्ष उपायनो, कोई न हेतु जणाय;
कर्मतणुं कर्तापणुं, कां नहि, कां नहि जाय. ७३

(३) समाधान - सद्गुरु उवाच

होय न चेतन प्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म?
जडस्वभाव नहि प्रेरणा, जुओ विचारी धर्म. ७४

जो चेतन करतुं नथी, नथी थतां तो कर्म;
तेथी सहज स्वभाव नहि, तेम ज नहि जीवधर्म. ७५

केवळ होत असंग जो, भासत तने न केम?
असंग छे परमार्थथी, पण निजभाने तेम. ७६

कर्ता ईश्वर कोई नहीं, ईश्वर शुद्ध स्वभाव;
अथवा प्रेरक ते गण्ये, ईश्वर दोषप्रभाव. ७७

चेतन जो निज भानमां, कर्ता आप स्वभाव;
वर्ते नहि निज भानमां, कर्ता कर्म-प्रभाव. ७८

(४) शंका - शिष्य उवाच

जीव कर्म कर्ता कहो, पण भोक्ता नहीं सोय;
शुं समजे जड कर्म के, फळ परिणामी होय? ७९

फळदाता ईश्वर गण्ये, भोक्तापणुं सधाय;
एम कह्ये ईश्वरतणुं, ईश्वरपणुं ज जाय. ८०

ईश्वर सिद्ध थया विना, जगत नियम नहि होय;
पछी शुभाशुभ कर्मनां, भोग्यस्थान नहि कोय. ८१

(४) समाधान - सद्गुरु उवाच

भावकर्म निज कल्पना, माटे चेतनरूप;
जीववीर्यनी स्फुरणा, ग्रहण करे जडधूप. ८२

झेर सुधा समजे नहीं, जीव खाय फळ थाय;
एम शुभाशुभ कर्मनुं भोक्तापणुं जणाय. ८३

एक रांक ने एक नृप, ए आदि जे भेद;
कारण विना न कार्य ते, ते ज शुभाशुभ वेद्य. ८४

फळदाता ईश्वरतणी, एमां नथी जरूर;
कर्म स्वभावे परिणमे, थाय भोगथी दूर. ८५

ते ते भोग्य विशेषनां, स्थानक द्रव्य स्वभाव;
गहन वात छे शिष्य आ, कही संक्षेपे साव. ८६

(५) शंका - शिष्य उवाच

कर्ता भोक्ता जीव हो, पण तेनो नहि मोक्ष;
वीत्यो काळ अनंत पण, वर्तमान छे दोष. ८७

शुभ करे फळ भोगवे, देवादि गति मांय;
अशुभ करे नरकादि फळ, कर्म रहित न क्यांय. ८८

(५) समाधान - सद्गुरु उवाच

जेम शुभाशुभ कर्मपद, जाण्यां सफळ प्रमाण;
तेम निवृत्ति सफळता, माटे मोक्ष सुजाण. ८९

वीत्यो काळ अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव;
तेह शुभाशुभ छेदतां, ऊपजे मोक्ष स्वभाव. ९०

देहादिक संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सिद्ध मोक्ष शाश्वत पदे, निज अनंत सुखभोग. ९१

(६) शंका - शिष्य उवाच

होय कदापि मोक्षपद, नहि अविरोध उपाय;
कर्मो काळ अनंतनां, शाथी छेद्यां जाय? ९२

अथवा मत दर्शन घणां, कहे उपाय अनेक;
तेमां मत साचो कयो, बने न एह विवेक. ९३

कई जातिमां मोक्ष छे, कया वेषमां मोक्ष;
एनो निश्चय ना बने, घणा भेद ए दोष. ९४

तेथी एम जणाय छे, मळे न मोक्ष उपाय;
जीवादि जाण्या तणो, शो उपकार ज थाय? ९५

पांचे उत्तरथी थयुं, समाधान सर्वांग;
समजुं मोक्ष उपाय तो, उदय उदय सद्भाग्य. ९६

(६) समाधान - सद्गुरु उवाच

पांचे उत्तरनी थई, आत्मा विषे प्रतीत;
थाशे मोक्षोपायनी, सहज प्रतीत ए रीत. ९७

कर्मभाव अज्ञान छे, मोक्षभाव निजवास;
 अंधकार अज्ञान सम, नाशे ज्ञानप्रकाश. ९८
 जे जे कारण बंधना, तेह बंधनो पंथ;
 ते कारण छेदक दशा, मोक्षपंथ भवअंत. ९९
 राग, द्वेष, अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रंथ;
 थाय निवृत्ति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ. १००
 आत्मा सत् चैतन्यमय, सर्वाभास रहित;
 जेथी केवळ पामिये, मोक्षपंथ ते रीत. १०१
 कर्म अनंत प्रकारनां, तेमां मुख्ये आठ;
 तेमां मुख्ये मोहनीय, हणाय ते कहुं पाठ. १०२
 कर्म मोहनीय भेद बे, दर्शन चारित्र नाम;
 हणे बोध वीतरागता, अचूक उपाय आम. १०३
 कर्मबंध क्रोधादिथी, हणे क्षमादिक तेह;
 प्रत्यक्ष अनुभव सर्वने, एमां शो संदेह? १०४
 छोडी मत दर्शन तणो, आग्रह तेम विकल्प;
 कह्यो मार्ग आ साधशे, जन्म तेहना अल्प. १०५

षट्पदनां षट्प्रश्न तें, पूछ्यां करी विचार;
 ते पदनी सर्वांगता, मोक्षमार्ग निर्धार. १०६
 जाति, वेषनो भेद नहि, कह्यो मार्ग जो होय;
 साधे ते मुक्ति लहे, एमां भेद न कोय. १०७
 कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्षअभिलाष;
 भवे खेद अंतर दया, ते कहीए जिज्ञास. १०८
 ते जिज्ञासु जीवने, थाय सदगुरुबोध;
 तो पामे समकितने, वर्ते अंतरशोध. १०९
 मत दर्शन आग्रह तजी, वर्ते सदगुरुलक्ष;
 लहे शुद्ध समकित ते, जेमां भेद न पक्ष. ११०
 वर्ते निजस्वभावनो, अनुभव लक्ष प्रतीत;
 वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकित. १११
 वर्धमान समकित थई, टाळे मिथ्याभास;
 उदय थाय चारित्रनो, वीतरागपद वास. ११२
 केवळ निजस्वभावनुं, अखंड वर्ते ज्ञान;
 कहीए केवळज्ञान ते, देह छतां निर्वाण. ११३

कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय. ११४

छूटे देहाध्यास तो, नहि कर्ता तुं कर्म;
नहि भोक्ता तुं तेहनो, ए ज धर्मनो मर्म. ११५

ए ज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्ष स्वरूप;
अनंत दर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरूप. ११६

शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम;
बीजुं कहीए केटलुं? कर विचार तो पाम. ११७

निश्चय सर्वे ज्ञानीनो, आवी अत्र समाय;
धरी मौनता एम कही, सहजसमाधि मांय. ११८

शिष्यबोधबीजप्राप्तिकथन

सद्गुरुना उपदेशथी, आव्युं अपूर्व भान;
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान. ११९

भास्युं निजस्वरूप ते, शुद्ध चेतनारूप;
अजर, अमर, अविनाशी ने, देहातीत स्वरूप. १२०

कर्ता भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्ते ज्यांय;
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्ता त्यांय. १२१

अथवा निजपरिणाम जे, शुद्ध चेतनारूप;
कर्ता भोक्ता तेहनो, निर्विकल्प स्वरूप. १२२

मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ;
समजाव्यो संक्षेपमां, सकळ मार्ग निर्ग्रंथ. १२३

अहो! अहो! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो! अहो! उपकार. १२४

शुं प्रभुचरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं चरणाधीन. १२५

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास, दास हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन. १२६

षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यान थकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. १२७

उपसंहार

दर्शन षटे समाय छे, आ षट् स्थानक मांही;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांई. १२८

आत्मभ्रंति सम रोग नहि, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
गुरुआज्ञा सम पथ्य नहि, औषध विचार ध्यान. १२९

जो इच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ;
भवस्थिति आदि नाम लई, छेदो नहि आत्मार्थ. १३०

निश्चयवाणी सांभळी, साधन तजवां नो'य;
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय. १३१

नय निश्चय एकांतथी, आमां नथी कहेल;
एकांते व्यवहार नहीं, बन्ने साथ रहेल. १३२

गच्छमतनी जे कल्पना, ते नहि सद्व्यवहार;
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहि सार. १३३

आगळ ज्ञानी थई गया, वर्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहि कोय. १३४

सर्व जीव छे सिद्ध सम, जे समजे ते थाय;
सद्गुरुआज्ञा जिनदशा, निमित्त कारण मांय. १३५

उपादाननुं नाम लई, ए जे तजे निमित्त;
पामे नहीं सिद्धत्वने, रहे भ्रांतिमां स्थित. १३६

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर् छूट्यो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानीनो द्रोह. १३७

दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षु घट विषे, एह सदाय सुजाग्य. १३८

मोहभाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत;
ते कहीए ज्ञानीदशा, बाकी कहीए भ्रांत. १३९

सकळ जगत ते एठवत्, अथवा स्वप्न समान;
ते कहीए ज्ञानीदशा, बाकी वाचाज्ञान. १४०

स्थानक पांच विचारीने, छट्टे वर्ते जेह;
पामे स्थानक पांचमुं, एमां नहि संदेह. १४१

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां, हो वंदन अगणित. १४२